नष्टनारी

अपर्णा महांति

ओड़िया से भाषांतरण
महेंद्र शर्मा

Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

नष्टनारी

अपर्णा महांति

ओड़िया

से

भाषांतरण

महेंद्र शर्मा



ज्ञानयुग प्रकाशन
भुवनेश्वर-१५, ओड़िशा

Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

नष्टनारी

अपर्णा महांति

ओड़िया से भाषांतरण :
महेंद्र शर्मा

प्रकाशन परामर्शदाता :
बिनोद बिहारी बिशोई
(M) 9937694781

ISBN 81- 89726- 43 - 9

प्रकाशक:
ज्ञानयुग प्रकाशन
एन-६/४२८, आइ.आर.सी. विलेज
नूआपल्ली, भुवनेश्वर - ७५१०१५
फोन नं. - ०६७४-२५५२०९१

मुद्रण :
क्रिएटिव आफसेट
एन-६/४२८, आइ.आर.सी. विलेज
नूआपल्ली, भुवनेश्वर - ७५१०१५
फोन नं. - ०६७४-२५५२०९१

प्रच्छद:
युगश्री बिशोइ

प्रथम प्रकाश : २००७

मूल्य: १००/-

NASTA NARI

Aparna Mohanty

Odia Se Bhasataran :
Mahendra Sharma

Publisher's Advisor :
Binod Bihari Bisoi
(M) 9937694781

ISBN 81- 89726 - 43 - 9

Publisher:
Gyanajuga Publication
N-6/428, I.R.C. Village,
Bhubaneswar-15, Orissa
Phone No.: 0674-2552091

Printer:
Creative Off-set
N-6/428, I.R.C. Village,Nayapalli,
Bhubaneswar-751015, Orissa
Phone No.: 0674-2552091

Cover Designed :
Jugoshree Bisoi

First Edition : 2007

Price : Rs.100 /-

Published by Smt. Susama Bisoi on behalf of Gyanajuga Publication, N-6/428, IRC Village, Nayapalli, Bhubaneswar-751015, Orissa. Ph: (0674)-2552091 / 2556107.

Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

''ताते अनचीन्हार, मैं चीन्हा''

कबीर का सच कहने का ठेंगा मारू अंदाज था - 'तुम्हारे लिए अनचीन्हा हूँ मैं - लेकिन चीन्हता हूँ मैं तुम्हें।' वैसे भी उनकी कविता भाग्यशालिनी थी कि उसके समकाल में कम से कम अवधारित 'साधो' थे, जिनसे वह संबोधित होती थीं। आज कबीर होते तो न जाने उनकी कविता किसे संबोधित करती !

सतत परिवर्तन कामी काल प्रवहण में भी नारी की सत्ता को देखने की वही दृष्टि मौजूद है आज यहाँ - ''मूलाधार / योनि / स्तन मंडल / कंठ से कपाल / सबने सोचा उसे पथ .../ ... किसी को दिखा नहीं / उसके समाधिस्थ नेत्रों के आगे / ये किस महासुख का / उद्भासित / असीम विस्तार .../'' यह क्षोभ का विषय है या विद्रोह का ! इसका उत्तर न दे, अपर्णा की कविता सिर्फ अपना परिचय देती है - 'नष्टनारी' को संबोधित। नष्टनारी जो - 'निसर्ग सुरति में / अपने को खो चुकी .. वह तो प्रीति की नीति हो चुकी / संसार और संपर्क की / विरति में / शून्यता की ओर के / रास्ते की और बढ़ने ब्यतीत / पूर्णता की भूमिका वा / क्या है और ...? ... शेष में नारीत्व का दुश्तर पारावार / अतिक्रम करती रहे / अधोरी शब्द सुंदरी / स्तब्ध तकती रहे / मुग्ध नष्टनारी /''- इस नष्टनारी के संबोधन में सर्वत्र ताच्छल्य का यह प्रच्छन्न भाव है कि नारी न माना तो फिर नष्टनारी मानों उसे, कोई फर्क नहीं पड़ता इससे। उसकी गरिमा ज्यों की त्यों है।

खंड खडं होकर ही अखंड पूर्ण की ओर खिंचा जा सकता है - अपने को कविता की नोक से- ''काट काट / देखती रहे / अपने अनजले पिड की कारीगरी / क्षण में पिंगला / क्षण में ईश्वरी / अपने अस्तित्व के / सकल बेढ़े हुए अलिंद / मुखशाला ... गर्भगृह की / परिक्रमा कर .... ''

नारी का खंड खंड होना नष्टनारी 'होना है जो स्वयं अपने को अधिक खंड खंड कर अखंड की ओर प्रयाण करती है। यहाँ इस विखंडन में तल्खी का भाव कहीं नहीं, है आनंद की सिर्फ प्रतिश्रुति। कविता रचाव की पूरी प्रक्रिया में छायारूप में और एक प्रचेष्टा भी चलती है, शब्दों को भावों को खंड खंड में काट काट कर देखने की- खंड खंड भावातंराल में शब्दांतराल में अपने को देखने की, तलाशने की। ये पूरी रचाव की प्रक्रिया मुग्ध करे न करे हमें ठिठका देती है जरूर - सुनने को और गुनने को।

Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

ऐसा लगता है कि कविता को समूचे ब्रम्हांड को संवोधित अनुगूंजित करना चाहिये - ''गगन की ओट निशाना है ... दाएँ चंद्रमा बॉए सूरज / इनके बीच कहीं ठिकाना है।'' नष्टनारी से संबोधिंत अपर्णा की कविता अपने को सर्वत्र ब्रम्हांड तक ढो ले जाने का प्रयास करती दिखती है। उसने बस - 'वही प्रश्न एक / पूछा है बारबार / कितनी दूर ... कितनी दूर जाने पर और वह देह हो / देह में न होगी / रूप हो अरूप को / अंत हो अनंत को / आदि हो अनादि को / अनायास छू पा रही होगी'' और ''किसी को दिखा नहीं / उसकी समाधिस्थ / नेत्रों के आगे ये किस महासुख का उद्‌भासित / असीम विस्तार ...।''

महासुख परमांनद उस शून्य पुरूष की ओर नारी का अवधारित विस्थापन अनेकानेक अध्ययन का विषय बनता है - 'देह की सकल आकांक्षा को प्राणभरा आदर देता' यह विस्थापन निश्चित तौर पर दर्शन से जुड़ा है।

वैसे भी कवि के पास सच की ठेकेदारी नहीं होती। उसके पास हमेशा संदिग्ध सच होता है। पर समग्र संसार भी तो संदिग्ध सच के सिवाय कुछ नहीं है। यहॉ है क्या ? जो है लगता है वह भी किसलिए किसके लिए ? सब कुछ संदिग्ध - वकौल मेरे -

प्रेम है अरूप-रूप के लिए
या देह-अदेह प्रेम के लिए
जीवन-मरण है अमृत महासुख़ के लिए
या महासुख है जीवन-मरण-रमण के लिए
तलाश है परम आंनद की
या परम आंनद है तलाश के लिए
तलाश है पथ पंथ की
या पथ पंथ है तलाश इसलिए
लेकिन किसलिए .. किसके लिए ... किसके लिए ..

इन तमाम प्रश्नो उत्तरों के वरक्स सुनने को गुनने को उकसाती अपर्णा की ये नवोढ़ा कविताएँ ...

- महेंद्र शर्मा

Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

सूचीपत्र

क्रम	शीर्षक	पृष्ठ

Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

उसे

उसे क्या
आँका जा सके तूली से ?
गढ़ा जा सके पत्थर से ?
कहा जा सके कविता में ?

उड़ान में ईगल
ढलान में जलप्रपात

रटन में कोयल
लोटन में लहर

जोड़ में सुवास
घटांन में सन्यास
लिए
वह ठिकाना
बदलती रहे बार बार

एक के निकट
जाने को
टेढ़ी मेढ़ी जितनी
राह कुराह
सीधी करती रहे वह
अपनी गति से

Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

वही एक
जो उसकी
सर्जना करे
सर्वस्व समर्पे
निर्विचार
निविड़ प्रीति से ।

कुछ ब्यथा
कुछ गीति
कुछ भ्रांति
कुछ तृप्ति
और आखिर
आत्मक्रांति से
होए नष्टनारी ।

अविकल
प्रकृति की तरह
नित नयी नयी
उसे गढ़ने वाला कारीगर
और कहीं नहीं होता ।

होता है
नष्ट नारी के
भाव में भावना में
कथा में नजर में
हँसी में रोष में
श्रमण में रमण में .

Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

कभी
वह नष्ट नारी का
पद प्रक्षालन करे
आँसू का नमकीन पानी बन

कभी
वह अपने
नंगे कपाल से
मीठा मीठा
रति - श्रम - वारे



Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

क्षण क्षण

यही
संभोग की बात
सच में है क्या ?

समभाग प्रकृति
समभाग प्रकृतिपुरूष
समभाग प्रज्ञा
समभाग उपाय
समभाग पद्म
समभाग वज्र
समभाग भग
समभाग शिश्न

समताल
समलय
सम आरोह
अवरोह से
भोग करोगे
स्व स्व पूर्णता को
शून्यता को

Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

मिलन की सुगंध को
मोक्ष के छंद को

आनंद, परमानंद
विरमानंद पथ में
निविड़ ... निश्चिन्ह
भोगोगे
सहजानंद को

निज आभ्यंतर सें
झर रहे
किसी अनिर्वचनीय
अमृत तृषा में
समाधिस्थ अगस्ति अधर
चूमेगा मूहुर्मूहू
उव्देलित सप्त समुद्र सा
नाभि केंद्र को ....।

संभोग क्या
काया सह माया का
क्षण क्षण
युक्त वियुक्त का
अनाहत अतिक्रमण
सप्रेम समर्थन !!

Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

नष्ट नारी
करे आवाहन ।

आओ
समभोग के
उल्लास और उद्भास में
ध्वंस कर दे ।

संभोग नाम से
जितनी जो
वेदना और अँधेरे का
प्रहसन ।



Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

चतुर्थ रमण

प्रथम रमण निद्रा
व्दितीय रमण स्वप्न
तृतीय रमण
पूर्ण जागरण ।

सहस्त्र दल कमल में
नित्यरति रचने का
भावातीत परम मुहूर्त्त
चतुर्थ रमण।

प्रथम निकट ही
सती नारी को
अटका रखे संसार
आरंभ से ।

गर्भाशय को खुले
गली-रास्ते को छोड़
अन्य सभी अनुभव के
पथ रूद्ध होते।

Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

संबल सिर्फ अश्रु
साक्षी रहे
अग्नि की दहन ।

व्दितीय में रहे
एकाकिनी
असती का घर
देह एक की
आत्मा किसी और की
फिर भी स्वप्न का मुँह
दिखे नहीं आँख को
दृश्य देह
दृश्य दाह
अदृश्य दोष की ।

तृतीय में...।
रमणी की रमणीयता
आः....
सचमुच दर्शन की बात
साक्षात भगवती के
नयन में चंद्र सूर्य
अधर में मधुकोष
उरोजों में अमृतकलश

Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

आदि अंत प्रेम
ईष्ट अभीष्ट प्रेम
प्रेम ही शून्यता उसकी
प्रेम ही सर्वस्व

प्रेम छोड़
अन्य कुछ
योगायोग - तुच्छता का
तथास्तु बोला जा सके
क्षण भर प्रेम सिद्ध
जिस किसी पुरूष को।

प्रेम के
उदभासित दिगंत से
बुझ बुझ जाए
रात रति रीति

नष्ट नारी
हीरों से बंधाए छाती
रमने
चतुर्थ रमण ।



Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

समर्पण

नष्टनारी
समझ चुकी
प्रेम और मुक्ति
दोनों
एक अभिन्न।

प्रेम में
निश्चिन्ह होता
अधिकार, अहंकार
मैं'कार ....,
जरा ब्याधि मृत्यु
होते तिरोहित

शरीर से
शरीर
आवाजाही करता रहे
पद्मपत्र पर जल की तरह
ढल ढल निर्मल आनंद
महकता रहे
क्षणजन्मा
अनंत यौवन ...।

Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

प्रेम ही
देह को करे
पवन, पानी, आलोक सा
निरीह उज्ज्वल।

प्राण से
शंका संदेह पोंछ दे

प्रस्फुटित होने का
रहस्य खोले

पाँव को पक्षी के डैने
हाथ में अज्ञात का
ठिकाना थमाएं।

क्रमशः क्षीण होते
अर्थहीन रे' रे कार नाद में
नष्ट नारी
पीछे मुड़ देखे
प्रेम है
कितना भार
कितना अंधकार
कितने कारागार को
वह सहती आई
इतने दिन ....।

Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

शर्त संपर्क शून्य
किस सुछंद उत्तरण
किस पवित्र आरोहण
किस दिब्य सम्मोहन के
अंत:पुर में सज्जित
ओंकार ईषिकार की
युगनद्ध मधुशय्या धार पर
मुक्ति के प्रदीप में
प्रेम-धर लौ जले

जान कर तो
वधूवेश में नष्टनारी ने
निज को किया समर्पण ।



Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

ध्वंस की वैतरिणी

किस बात की
इतनी बात ...।

प्रेम द्रोह
तुम अन्य लोग या
और कुछ के लिए नहीं
खास अपने लिए
इस वार उसकी
समग्र कविता

चतुर्दिग अंधेरा
सुनसान होने पर
कहाँ से क्या जाने
उसके भीतर
जमा होती आकर
कोटि कोटि नारी।

उसे कवलित करतीं
अपने अपने आँसू का हिसाब

Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

लिखती उसकी पलकों पर
आर्त्तनाद और क्रोध को
बम सी सजा देती
गले में

निष्फल आक्रोश में
छाती को उसकी
विदीर्ण कर ।

उनका
जन्म, मृत्यु
बलात्कार
भ्राति और स्वप्न भंग के
राशि राशि
सत्य कथन से
उसकी फर्द फर्द
अंतरात्मा
सभी शास्त्र पुराण
महाकाव्य इतिहास से
वजनी लगें।

यातना नगर की ओर
रौंद चले
उनका जुलूश
वह पाँव घिसटती रहें

Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

पीछे, उन्मादिनी की तरह
इधर वारण करती रहे
तो उधर
अनुशरण करती रहे
असहाय ....।

हँसती रहे रोती रहे
या गीत गाती रहे
क्या जाने ....।

कोई कहे नष्ट नारी
कोई कहे कवि

उसका गुनगुन
स्वर सुनाई दे किसी को
राग आशावरी सी
कोई उसमे सुन सके
ध्वंस की भैरवी



Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

माँ

माँ भै   माँ भै

किसीके सुरझाए गाल से
आँसू का दाग पोंछ

किसीके उदास मुँह को
छाती में एकबार टिका

किसी के अदेखे घाव को
दीर्घश्वास से सहला

किसी के देह प्राण को
दो बूंद आँसुओं से
शीतल कर

किसी के टूटे हृदय को
अकाट्य सत्य में
सहेज
नष्ट नारी कहती जाए
माँ भै.... माँ भै ...।

Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

बंधु नाम का
कोई नहीं होता
उस एकाकिनी
नारी के संग ।

जिन को एकांत में
वह दंभ दे
सांत्वना दे
अपना सोचे

वही
पाँच के संग
भौं नचाते
एक और एक के
कान में कहे
- चरित्रहीन है जी
अमुक कह रहा था
समुक के संग
इसे केलि करते
उन्होंने देखा था
अमुक रात .....।

नष्ट नारी
सब सुने
हँस दे अफसोस करे....

Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

केवल देह मन नहीं
चेतना को भी
युग युग की नीचता
हीनमन्यता के निकट
विक्री कर चुके
प्रिय सखियों को

पृथ्वी की मुक्ति के लिए
वह छुड़ा सकेगी
सच में, कौन मूल्य चुकाए ?

आत्मा से....
एकदा निकाल फेंके
असती सतीत्व के
टूटे खोलपे
सहसा झलक जाए
अपार्थिव आत्मविश्वास की
अशेष मुक्ता मणि होकर।



Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

अर्द्धांग

एक सरल सत्य ....।

सभी सुख आंनद
वहाँ समाहित
जहाँ रति प्रमत्त
अखंड सह खंडित
अनित्य सह नित्य।

कोई महिमान्वित
नहीं वहाँ
इतर नहीं कोई

तरू तृण
पशु पक्षी
नदी पर्वत
रज रेत
सभी उपस्थित
अनुपस्थित
केवल मै' कार।

Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

जाग्रत कुंडलिनी के
नागवंध में
छंदित, नृत्यरति
सभी शबरी
नैरामणि सब भगवती
भगवान प्रत्येक शबर

चर्वित चर्वण
मंत्र जितने
शास्त्र क्रिया कर्म

छलना, प्रवंचना
हिंसा, अहंकार
प्रचार करते
जितने धर्म अधर्म

समझने से
डर मत किसीको ?

माताल महुआवन
चाँदनी रात
उच्छन्न गात
विहग कूजन
पहाड़ी झोले में सुर तान
या अमावस के
निरीह अँधेरे में

Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

जिसे जिसने
जहाँ छुआ
वहीं मृत्यु
वहीं पुनर्जन्म
वहीं जीवन का
अमृत ओंकार

निशर्त्त
निरहंकार
ब्रम्हांड को लेने तो
पिडं यह !

इतना मात्र
जानने के आलोक में
नष्ट नारी
एक के बाद
एक प्रमाद
अतिक्रम करे
अवलीला में

या सहज सुख की
छाया एक
रास्ता दिखा दे

अर्द्धांग नारी उसका
अर्द्धांग ईश्वर।



Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

प्रीति से कविता

प्रीति से कविता
कविता से प्रीति
नष्ट नारी राज्य में
इतनी राजनीति।

देह की गाँव गँवई
देह नगर
देह के खेत खमार
देह का मंदिर
देह का माटी - आकाश
देह सागर ।

हर कहीं कविता की
छोटी छोटी कलंक कुटिया
नान्हे नान्हे धानफूल
सर्सों फूल
छोटे छोटे देव
रेणु रेणु धूल
नान्ही नान्ही चिड़िया
और नान्ही नान्ही मछलियाँ।

Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

कविता के
झिलमिल दिन
पीछे पीछे
पीछा करे
कविता की
रात रूनझुन

मन के हाट में
कितनी खरीदी बिक्री ...।

चोर नजर
गोपन चिट्ठी से
आंसू के मोती
और लहू के माणिक।

निश्वास दरिया में
कविता की
गुनगुन
छोड़ जाए
मन का वणिक।

पात्र मित्र
परिषद

Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

सभी तो चाटुकार अपवाद के
पुजारी पाप के

सिंहासन तो
हृदय का
चक्रवर्ती प्रेमी प्रवर
इष्ट देवम
नष्ट नारी स्वयंम



Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

पद्म सुवास

कवि होने नहीं
कविता में धूलिसात होने
कविता लिख रही
नष्ट नारी।

कविता कहने पर
कोई कुछ
समझे न समझे
कवित्व
आनंद समाहित
सकल भावना
दुर्भावना से मुक्त।

कविता तो
नष्टनारी हृदय का
अभय आश्रय
उसके अतल तल मन का
सत् का सुर - ताल - लय।

Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

नीचे माटी ऊपर आकाश
बीच में कविता की
स्फटिक स्वच्छता में रास
आत्मा का सहज उल्लास।

आलोक पवन
डोरी में बंध
किसी दूर दूरांतर-
संचरता
उकपट ऊच्च उसका
चरम विलास।

नष्ट नारी धीरे धीरे समझे
कविता में
सामाजिक असामाजिक प्रश्न
कितने अवांतर।

जननी भगिनी जाया
सभी झूठ माया

प्रेम को समर्पित होने में
अकुंठित अनुराग पास
कितने तुच्छ
इंद्र चंद्र
तनु मन

Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

वेश वास
संभोग सन्यास।

जो शोक से
निचोड़ ले सुख
वही नष्ट नारी का
उन्मना प्रेमी
उसकी कविता का
ईप्सित नायक।

सभी देखें
नष्ट नारी के अंग अंग
कितने पंकिल कलंक

निज को निशेष कर कर
हर छुअन में
जो कविता सिवाय
अन्य कोई दाग रखे नहीं
नष्ट नारी के नग्न समग्र में

वही तो उसके
उसके प्रेमिकापन का
मुकुलित पद्म-सुवास।



Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

दृश्य अदृश्य

दृश्य अदृश्य
कितनी डोरी
स्वार्थ सुविधा
शंका संशय
ईर्ष्या क्रोध असूया
आघात इंगित
सुहाग निर्भरशीलता
अलंघ्य सामाजिकता
सर्वोपरि ।

जिज्ञासा की
आत्मघाती छुरी से
टुकड़े टुकड़े में
कट जाने के बाद
एक अपूर्व ठाँव
अपने को
आविष्कारे नष्ट नारी ।

न दुख न सुख
न पातक, न मोक्ष

Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

वहाँ धर्म कर्म की सभी
परिभाषा मूल्यहीन
अर्थहीन
इहलोक या परलोक।

छिन्नभिन्न आंचल से
खींच लाए वह
सूत भर कोमल करुणा
उतने से
अपने संग
जल थल आकाश को
बाँध ले कितना कस के !

उसके कान में
अब संसार भर के
आर्त्तनाद नीरव
स्पष्ट सुनाई दे

सभी चाबुक और
ढ़ेले पत्थर की मार

उसके तमाम शरीर में घाव करे
पवित्र सतीपीठं का
चंदन काठ और
निरंध्र रसोईघर की
किरासीन
उसे ही जलाए

Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

आकूल से ऊर्ध्व को
दोनो हाथ उठा
वही ऊभचूभ होती रहे
उसे
डुबाए बहाए
सभ्यता के आंरभ से
अब तक गच्छित
अथल थल
जितनी अश्रुवारि ।

अपने को सभी नारी के
निभृत एकांत
असहाय धरती तले
सहेज रखने के
अश्रुल - आंनद को
एक नष्ट नारी जाने ।

जुबान न खोले
किसी की बात से
इधर उसी के कारण
पृथ्वी नष्ट
हो गई कहते
चारों ओर
हो जाए हल्ला ।



Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

आँखभर सपन

आँख भर सपन
छाती भर विभोरपन
वयस के पासंग में
तौला न जा पा रहा
प्रेमिका का
लहरों सा मन।

सजा सहेज
तीर्थ में पाँव रखते समय
रात बीत जाए

छाती पर लदा
पाषाण
सूखी बेला बालू पर
कुछ बासी फूल
देवों के निष्पलक
उजड़े नयन।

Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

पुरी भूल न पाए नष्टनारी को

नष्ट नारी भूल न पाए पुरी को
आहा
नष्टनारी पुरी !

सिंहद्वार सामने
अनंत प्रतीक्षारत
दृष्टि के शामियाने
देह की जुगलबंदी में
नृत्यरत समुद्र लहरें।

आत्मा के
परिणय लग्न में
बड़े ठाकुर अधर पर
इंद्रद्नुषी बंकिम हास
गोल गोल पलकें
और 'बलिया' के भुजतले
दो अर्पित प्राण के लिए
अशेष करुणा की वह
रहस्य माधुरी।

रत्न सिंहासन छूकर
नष्टनारी के लिए
धनजन के बदले

Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

और कुछ
माँगे नहीं प्रेम ।

लौटती राह में
सिर सहला कर
पुरी कहे
नकरोन्ही प्रेम पगली को

और एकबार
अकेली आना री !
स्वर्गद्वार बालू पर
सजी होगी तेरे लिए सेज
भूल जाएगी
सारे पथश्रम ।



Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

चिरंतन जीवन-सिहरण

भरपूर क्षण एक
हाथमुट्ठी में रखी
नष्टनारी ।

उसी क्षण भर में है
जन्म जन्म की
अभीप्सा और ऊर्ध्वायन
लाखों शिशिर बूंदों का चुंबन
एक तारा का
ऊष्म आमंत्रण
सहस्र पद्मकोष में
सात सहस्र भँवरों का
उन्मत्त रमण ।

उसी एक क्षण में है
एक का और किसी का
हो जाने का सम्मोहन ।

Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

यह क्षण
देने को वह
इच्छा करे तुमको

तुम तुम्हारे
जामा जूते सहित
देह मन भी
खोल आओ
भीतर

वह हाथमुट्ठी
खोल देगी
तुम्हारे निश्वास से भर जाएगी
चिरंतन जीवन की
अव्यक्त मधुर
वही सिहरण।



Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

प्रेम संपर्क

प्रेम को
संपर्क
कौन कहे

नष्ट नारी जाने
प्रेम कोई संपर्क नही
प्रेम
क्रमविकसित एक
दिब्य अनुभव

आरंभ होए
देह से ...
यौवन से
यही न रूक
चल सके उसके संग
वह हाथ पकड़ खीचं ले
ऐसे एक विव्हल देश को

जहाँ होती है
एकाकीपन की स्वाधीनता

Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

निंदा कलंक अपवाद
सब होता है
नहीं होती केवल
निज सहित निज की
विश्वासघातकता।

संपर्क के
संसार में ....
एक होने के बंध बाड़ से
हुआ नही होता भाग भाग
वह देश

कविता के
उच्चारण में
आत्मा का कस्तूरी मृग
घूमता फिरे
बुन बुन प्रीत की सुवास

वहाँ आपाततः अकेले
दिख रहे लोगों की आँख में
सात सागर का जल
छाती में धरती की ताव
शून्य - मुट्ठी में
अनंत आकाश।



Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

पहचान रखो

अपर्णा महांति
पहचान रखो यह एक
साधारण नारी के हस्ताक्षर।

मिटाने से मिट जाएंगे
पलक झपकते
पढ़ने बैठो पढ़ते रहोगे
युग युग

सभ्यता के प्रथम दिन से
अब तक ...

कितनी माया
कितना मोह
कितनी दाह
कितना द्रोह
कितने लहू
कितने आंसुओं के
इतिहास को

Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

चेतना शिलाखंड पर
खोदने के बाद
कोई नष्ट नारी साहस कर
आखिर लिखी है
ये कुछ अक्षर।

तैंतीस कोटि देव देवी के आगे
दुर्गा के विवसन होने से आरंभ कर
अहल्याके पत्थर होने
वैदेही बारबार
अग्नि, पाताल मे घुसने
पांचाली जुए में बाजी बनी
आदि, जानी सुनी
असाधारण असहायता सहित।

गार्गी की गर्दन उड़ाने की धमकी
हकले की कटी जीभ की दयनीयता
रूपकँवर की ज्वलंत दहन
बनवारी के सामूहिक बलात्कार
तसलिमा को मौत के फतवे को
उसने शरीर पर झेला है।

बाप के निर्मम प्रहार से
क्षत विक्षत माँ की देह को
सहलाते वक्त

Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

बहन की जलती चमड़ी से
आग बुझाई है।

निरापद अँधेरे में
स्व शून्यता दिग में
दौड़ रही
बेटी को लौटा लाने को जाकर
ठोकर खा रक्ताक्त हुई है।

प्रेमी पति पुरूष के
विलास स्वार्थ अहंकार को
काल काल भोगने बाद भी
जुबान खोली नहीं
अपने भीतर
खुद को खोज खोज
असंख्य संवध
और संस्कार जंजीरो को
खुद से अलग किया है।

ढेर ढेर
कटी जीभ
कटे हाथ पाँव
ढेर ढेर जली चमड़ी में
रसाणित अपरिचय के
स्वर्ण फलक पर

Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

रत्न सी जड़ित न हुई
आत्म निर्वासित इस
अस्मिता में
जानती है क्या

एक साथ गच्छित है
संसार के सब मृत जीवित नारी के
आत्मविश्वास के जीवाश्म
त्रस्त तिरस्कार
और मौन हाहाकार.... ।



Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

कष्ट दे वहुत

यही नष्ट वाली बात
मुझे कष्ट दे बहुत

इतनी परिपूर्ण
दिख रही नारी को
नष्ट नारी
क्यों कह रहे हैं ?

कैसे समझाऊँ
यह प्रश्न पूछे
प्रिय कवि को

नीरवता में चकरा रहे
सभी प्रिय पाठकों को
कि एक नारी
सत्य और आत्मा
अन्वेषा में
आगा पीछा न सोच
पाँव बढ़ाले ...
संसार में नारीपन
हो जाए झूठ !

Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

नारी प्रेम करेगी नहीं
प्रश्न करेगी नहीं
तर्क करेगी नहीं
मुक्ति मांगेगी नहीं
प्रज्ञा के शिखर को
या अपने
अतल तल अंतर को
देखेगी नहीं:

यह सब करतीं खाली
डायन या
दोचारिणी सब ।

इसके लिए क्या
डोमी, शबरी
चांडाली नैरामणि दारी !

जिज्ञासा के पथ में
जाते वक्त
वस्त्रालंकार सहित
फेंक दे गई
मानमहत, कुल गोत्र
संपर्क, संस्कार

देह को की थीं
जाग्रत कुंडलिनी
संभोग को हरिद्रा चंदन

Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

अक्षत के
मह मह नागबंध
ईषिकार
ओंकार
समस्वर कर

मौनता के जहर को
साधना को सुधा तुल्य
आकंठ पान की थी
असीम शक्तिशलिनी
ये जितनी
सहज सुंदरी ....।

नारी की चिराचरित
निष्प्राण भावमूर्त्ति को जकड़े
बेचारी परंपरा
रोएगी
नहीं इसलिए
सर्वज्ञा अवधूतिका
सानंद साजीं
तुच्छादपि तुच्छ
नष्ट नारी ....

अपनी
लालसा और अहंकार के
अधिकार मुताबिक
नारी की यौनता को

Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

रूपरंग दिए हुए
भयातुर दुर्बल
विलासी पुरूष के लिए
देवी भी बाध्य हो
उपस्थित होने को निर्वस्त्र
तैंतीस कोटी देवदेवी के
चक्षु सम्मुख ?

अपरिसीम
निसर्ग यौनता के
तेज से उत्फण
नष्ट नारी को
ले पुरुष
निर्विचार से
उसके पाँव निकट
सौप दे ...
शर्त्तहीन
समर्पण की छाती

नष्ट नारी
उसे पुरुष से साधक
साधक से प्रेमी
प्रेमी से शिव रूप में
अपनी शक्ति पीठ में
आवाहन ....
संस्थापन करे ।

Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

महामुद्रा में
स्थिर रहे
उसके बाद
सृष्टि .... स्थिति लय।

आदि से
अनंत को
विहरन के लिए
गढ़ी जाए पांत पांत
सुख की सीढ़ी



Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

प्रेमीपन

प्रेमीपन को
जितनी अम्लान
नष्टनारी

पंडित पन को वह
उतनी मलिन ।

पंक लगने के भय से
पंडित की दृष्टि
हमेशा नीचे नीचे ।
गले तक पानी पंक
चाहे जो भी रहे
सूर्य को प्रेम करने के
लोभ में .....
नष्टनारी की दो आंखें
अहर्निशि विकचनलिन ।

गुन न चीन्हने वाले
गुनिया
सत्य से प्रेम न करने वाले
कवि ....
आत्मा से दूर रहने वाले
आत्मीय...
अमोघ अग्निवाण

Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

निक्षेप करते करते
चिंदी भर आग की तरह
नष्टनारी को
अपनी अपनी शंका और
लालसा के लक्षागृह में
सजा रखते हैं।

जितना जले
पिघलता रहे भीतर
दंभ-अभिमान
उतनी अपनिंदा
बाहर चिल्लाती रहें।

निज को
पूरी तरह
अंगार में
गढ़ने के बाद
नष्ट नारी का और
भय क्या ?
भ्रांति क्या ?

रे' रेकार की
प्रखर आग में
सात पाँव से
शत पाँव को जला जला
वह झूम चलती रहे

कोटि जन्म का
एक ही मानसिक
प्रिय से - मिलन



Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

असत्य के पास

असत्य के पास सत्य
भय के पास निर्भिकता
संशय के पास प्रत्यय
प्रवंचना के पास प्रेम
रहे नही ज्यों

संसार के
छल छद्म के पास
रहे नहीं नष्ट नारी

आकश की
अनंत नीलिमा दिग् में
बांहे पसारती बेला
दिखे नहीं
तुच्छता को
प्रतिष्ठित करने का
छिद्रपथ।

प्रेम के नग्न सम्मोहन को
सर्वस्व समर्पण के बाद
उसे जकड़ न पाए

Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

और कोई बंधन का
रेशमी आंचल ।

सबसे अंतरंग
आकाश में ऊबटूब
खुली खुली छाती

सभी प्रतारणा को
बेखातिर करती
दो साफ आँखें

और बार बार
राह भूलने के आघात सें
रक्त लथ पथ
दो पाँव

श्वैरिणी या संन्यासिनी
सचमुच
किसकी तरह दिखे वह ?

रंग बेरंगी
आँखे झुलसाती छलना
चिकमिक लोक दिखावा
आत्मबड़िमा में
मतवाले जलशे के बाहर
वह खड़ी रहे
उपेक्षित, अनाघात
निर्मल आत्म विश्वास की
शांत शीतल एक माल
चंद्र मधु की तरह ।



Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

वह प्रेम करे

वह प्रेम करे
सौ सौबार
प्रेम करे।

सिर्फ बातों
या चिट्ठी पत्री में नहीं
सर्वस्व हरा दे
प्रेम में
और मरे।

जितनी बार प्रेम करे
उतनी बार मरे।

चरम आत्मविस्मरण के
परम आह्लाद सिवाय
प्रेम में प्राप्ति
और क्या कि ?

नष्टनारी
उतने के लिए
कभी
नदी धार को
सेज माने

Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

गलित शव को
माने नौका
विषधर सर्प को
अंतिम अवलंबन
सोच, जकड़ धरे

प्रेम में
केबल विफलता
मिले ऐसा
जो
प्रकट कहें
अन्य को दोष दें ।

उनके लिए
नष्ट नारी
निज के प्रशस्त कपाल में
लिख रखी ये वार्त्ता ।

प्रेम में
सभी आँसू मुक्ता
सभी रक्तक्षरण गुलमोहर
सभी दीर्घश्वास पद्मवन
सभी अँधेरा चंद्रोदय
सभी आघात महाप्रसाद
सभी ब्याकुलता में
ईश्वर को आलिंगन करने की
पवित्रता ।



Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

प्रेम में

प्रेम में प्रतारणा को
स्वीकार करें नहीं नष्टनारी

प्रेम तो
उसके अंतर का
सात राजा धन
प्रतिशब्द प्रतिरोध
प्रतिस्पर्द्धा हीन।

अपने को
अकुंठित ढालना
जिसका धर्म कर्म ध्यान
हृदय के टलमल
बाँस नट खेल में
जितनी एकाग्र
उतनी वह उपायविहीन।

इसी आत्मशून्य
तल्लीनता के प्रबल

Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

प्रवाह सामने
प्रतारणा की तरह
तुच्छ एक अनुभव
रहे कैसे ??

नष्टनारी का प्रेम
प्रथम प्रार्थना
और शेष समर्पण
बीच
कृतज्ञ कुछ पल के
शर्त्तहीन विरह मिलन।

प्रेम 'समझौता' नहीं कि
खिलाफ होने के भय से
वह आनंद लहरी मे
टटोले घाट पत्थर
संकुचित कर दे
देह ..मन.. प्राण।

नष्ट नारी जाने
प्रेम तो अबाट
किस अनंत काल से

प्रेम पथ से
उसे चुनना होगा कांटा

Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

और बिछाना होगा फूल
उसके साथ
कौन कितनी दूर
चला न चला
यह हिसाब करने से
डर क्यों ??
वह बार बार

वरण करे
आवेग के उन्मत्त अंगीकार को
प्रेम में उच्छन्न
उसके अस्तब्यस्त
जवाकुसुमी पाँव के पास
पड़ें सभी पगचिन्ह
दिखें देवोपम
अक्षय अम्लान



Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

प्रवाह सामने
प्रतारणा की तरह
तुच्छ एक अनुभव
रहे कैसे ??

नष्टनारी का प्रेम
प्रथम प्रार्थना
और शेष समर्पण
बीच
कृतज्ञ कुछ पल के
शर्त्तहीन विरह मिलन।

प्रेम 'समझौता' नहीं कि
खिलाफ होने के भय से
वह आनंद लहरी मे
टटोले घाट पत्थर
संकुचित कर दे
देह ..मन.. प्राण।

नष्ट नारी जाने
प्रेम तो अबाट
किस अनंत काल से

प्रेम पथ से
उसे चुनना होगा कांटा

Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

और बिछाना होगा फूल
उसके साथ
कौन कितनी दूर
चला न चला
यह हिसाब करने से
डर क्यों ??
वह बार बार

वरण करे
आवेग के उन्मत्त अंगीकार को
प्रेम में उच्छन्न
उसके अस्तब्यस्त
जवाकुसुमी पाँव के पास
पड़ें सभी पगचिन्ह
दिखें देवोपम
अक्षय अम्लान



Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

मन का मनुष्य

कविता सभा में
जाते वक्त
नष्टनारी पहनी होती है
प्रेमी की
उपहार साड़ी।

उसके मन का मनुष्य
खाली कविता के
शब्द में नहीं होता
भाव की शिर प्रशिरा सा
साड़ी की सूत सूत में
बुना होकर
उसकी देह के
अणु में अणु में
होता है गुंथा।

नष्टनारी जानती है
धन की जगह
मन का सारा
अनुराग उंड़ेल

Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

साड़ी खरीदी होगी
प्रियतम ने उसके !

हंस पद्मफूल में
मोक्ष और मिलन को
क्रम से
बुना होगा और एक बार।

आंचल के कोणार्क में
महामिथुन की भंगिमा
चित्रित की होगी उस
प्रणय के महाचित्रकार ने।

पहनने पर
क्या सुंदर न दिखेगी !
सोच सोच
उसके हाथ
घूम आए होंगे
साड़ीभर।

उस निर्जीव पाट साड़ी के
नीचे नीचे
नष्टनारी की
अतनु स्पंदित देह
हुई होगी सजीव साकार !

Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

सभा में
कविता की पंक्तियाँ सब
प्रेमिका के समर्पण की तरह
धीरे धीरे
खुलतीं

आँसू से भींगती
नष्टनारी की साड़ी की पल्लू
स्नेह के जयगान से
सभागृह
उछल जाए ।



Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

देखो संगिनी

देख री संगीनी
मेरी नग्नता
कितनी सचमुच
निष्पाप निरीह

देखो तो
कैसा ब्याधि जर्जरित
असहाय,
परित्यक्त
मेरा गर्भाशय।

इस मुट्ठी भर
रक्तमांस भीतर
खोज पाई क्या
कण भर् आग
या किमि़या
जो दह सके
मोह सके
संसार को

Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

संपादन कर सके
संसार भर के पाप का

इसलिए क्या
सकल ध्वंस मूल में मैं ?
सच में मेरे लिए क्या
सृष्टि का समस्त तांडव
समस्त प्रलय ???

कुछ नहीं ... कुछ नहीं
मैं तो चिरकाल
स्थितिमति, ऋतुमति
भोग्या वसुंधरा

आंग धुँआ किमिया
विष अमृत
स्वर्ग-नर्क
पाप पुण्य

सभी उन्हींका सिरजा
उन्हीं वीरों की
सब प्राप्ति
जितनी जय
जितनी पराजय
युद्ध लड़ने की

Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

कभी भी
इच्छा करे नहीं नष्ट नारी ।

छोटी सी देह उसकी
प्रेम करुणा कल्याण से
स्वच्छ सुगंधित
समर्पण की दीपावली से
उद्भासित ।

सृजन की पुलक से
पुलकित ।
कभी प्रिया तो
कभी
माँ पुकार को
कान लगाए ।

हृदय का
संगीत सुनने की
आशा में तो
वह चुपचाप
हमेशा ।

Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

अपनी अपनी
हिंसा और अंहकार का
डिंडोरा पीटते
दोनों पक्षों के
बाहुबली सब
उसकी कोमल नीरवता को
पहना दें
आर्त्तनाद ध्वनित
ध्वंस का वलय



Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

नीरव दुर्घटना

महीयसी
होने की कला
नष्टनारी जानती नहीं

सती, देवी
दुराचारिणी की तरह
कितने छद्मवेश
उसने पहने
और उतार चुकी

क्या जाने
किस किस
चौराहे खो चुकी
नारीपन के
जितने सब
गम्य - अगम्य
ठिकाने ।

आज उसके
देह मन में
अणु भर शून्य स्थान नहीं

Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

हर कहीं लिख रखी
प्रत्येक संपर्क संग
अंग में निभाई हुई
जिज्ञासा, समर्पण
संशय, विस्मय
साहस असहायता
प्रेम और घृणा

प्रकाश्य में
खुद को खुद
सत कहते
स्वर से
विपज्जनक प्रतिरोध
और क्या हो सकता है
महान होने की
भव्य प्रतियोगिता में ?

अपने को
अपने से छिपाए छिपाए
नष्टनारी
खेल न सके संसार का खेल।

Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

इतना बस जाने
वह स्वयं निहत होगी
गोली या अफवाह से

किसी जिस पल
उसकी आत्मा दर्पण में
प्रतिबिंबित होगी
पृथ्वी की
सबसे नीरव दुर्घटना



Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

श्रावण में

श्रावण में
शालवन में
नष्टनारी
वर्षा बन झरे।

वारिधार झर झर
नग्न शालगाछ के
कपाल आँख ओठं
छाती बाहु
नाभि नीचे
चुंबन कर कर
उतर आए
पाँव तल की माटी पर
शालपेड़ की डाल
छाती पर उसे
जकड़ धरने को
आवेग से
झुक झुक पड़े।

Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

आकाश में वर्षा
प्रेमी शालगाछ के
आलिंगन की वर्षा
ऋतुस्नाता माटी की
रज गंध की वर्षा

पूर्व राग का शिल्पी
इस समय
शाल भंजिका की भंगिमा
हृदय मंदिर में गढ़े

अरण्य सिवाय
कोई और
इतना सुख न दे
इसलिए तो
नष्टनारी
घरछोड़ अबेर
रहे अरण्य में...

घोर वन
पहाड़ गुफा में
पाँव रखते ही
किसके अभिशाप
या वरदान से न जाने
उसका सर्वांग बदल जाए
उच्छन्न जल प्रपात में ....।

Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

आत्मलिंग, प्रमत्त योगी को
महासंगम मंत्र से
वह अभिषेक करे ।

रात आलोकित होए
दिवस अंधेरा

महासंध्याकाल लग्न
विगत न हो
स्थिर हो रहे
उतने काल

जितने काल महारास मंडल में
जन्म मरण का चक्र
आवर्त्तित होता रहे
भूलकर देह विकार ।



Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

एक देह में

एक देह में
कितनी न कितनी
देह का अनुभव
भोगी है भोग रही
नष्ट नारी

वही एक देह तो
एकल बोध की पादभूमि

वहीं से आरंभ होते
तमाम व्दंद्व
तमाम पीड़ा
तमाम साँकल
तमाम द्रोह

फिर
सुखतम सुख
आनंद की
समाहित ब्याप्ति - विलुप्ति में
मुक्ति, अवाध

Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

विचरण किया जा सके
उसी के भरोसे

इस
छोटे, भंगुर
रक्त मांस पिडं की
क्या शक्ति !

क्षण में फेंक दे
योजन जोंक सरीसृप
कृमि सिलबिल
चौरासी नर्क भीतर

क्षण में उत्तीर्ण कर दे
रमने को
पारिजात सुवासित
स्वर्णदा सिंचित
बंशी स्वन सम्मोहित
मृत्युहीन
दिब्य स्वर्ग पुरी

वह धर्म अर्थ
काम हो या मोक्ष
देह ब्यतीत

Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

आत्मा को निवेदित होता
कौन सत्य ?

नष्टनारी
कविता की तरह
देह को गढ़ रही, पढ़ रही है
साक्षी हो
अवाक देख रही है
कभी
उसकी देह
माटी खिलौने सा
तुच्छ असहाय

कभी
आलोक पुलक में
डैने फैलाए
उड़ी है वही देह
सच में जैसे
सुधा से बनी
कोई परी



Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

सच कहा

सच कहते हो
प्रतिवाद
या प्रत्याख्यान नहीं

आमंत्रण
समर्पण
रमण में
रहे नष्टनारी

नष्टनारी जाने
आमंत्रण की सत्यता
समर्पण में शुद्धता
रमण में पूर्णता
होने पर ही
ये संसार सजेगा
एक धार में
निसर्ग कोमल
इच्छा की तरह

Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

बहुत साहस से
इतिहास के प्रतिकूल वह
दीर्घ पथ अतिक्रम कर
चलती जाए।

निंसर्ग सुख सकल
विरोध मे
सभ्यता का करारनामा
हस्ताक्षरित होने के पहले
थी जो
द्वंद्वहीन जीने की
मधुक्षरा भूमि
वही वह अपने को पाए ।

वहाँ तो
स्वाति लग्न का मेघ
बिना वाक्य ब्यय के झरे
शामूका गर्भ में।

कमल की छाती से
जड़े भ्रमर के
ऊष्म शव को
सूर्य की प्रथम किरण
सहला दे
कितने आवेग से ।

घास की गोद में निद्रित
शिशिर बिदुं के ओठो पर

Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

दूर आकाश तारा
रात्रि शेष में
विदाई चुंबन
देता रहे ।

अशुद्ध निषिद्ध
कुछ नहीं होता
समाहित विस्मय से
परस्पर दिग में
बाहु पसार दें
दो नग्न नर नारी
स्रष्टा की श्रेष्ठ इच्छा
करने को तत्क्षण पूर्ण ।

रतिक्रिया की धार में
प्रतिक्रिया हो
मिल जाए माटी में

संपर्क नाम से वचे
केवल प्रेम
प्रार्थना और कृतज्ञता

स्थूल सूक्ष्म
जंजाल में पड़ने को
कोई प्रज्ञावंत
नहीं होते वहाँ

अनाहूत शृंगार की

Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

नष्टनारी

पूर्ण से पूर्ण को
विभाजित करती रहे
शत कोटि बार
अवशेष रहे
केवल पूर्णता



Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

सभी नारी अंग की तरह

सभी नारी अंग की तरह
स्तन, जाँघें
यौवन के
अतिरिक्त
जीभ एक टुकड़ा रखी है
नष्टनारी।

धन जन गोपलक्ष्मी
शास्त्र पुराण या
यश कीर्ति लालसा से नहीं
आत्मा को रूचे तो
हाँ ... हाँ हाँ
न रूचे तो
नहीं ... नहीं ... कहना
सिखाई है उसे
बहुत कष्ट से ।

इसी चार अंगुल
नग्न धार दार

Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

जीव्हा के लिए
नष्टनारी की
मक्खन सी देह
कांटे की तरह छिद जाए
सभी मर्म से।

नारी देह पर
निरंकुश प्रभुत्व
और अधिकार कोरस को
स्तब्ध करे
ये कौन ?
ऊँचें गले से
केवल मुक्ति और
आनंद की बात कह रही
प्रेम से !!!

ये बात सुनने पर
बड़ी सुलभ सुस्वादु
नारी देह
प्रश्न का ज्वार बन
बहा लेगी
क्षुधित विलास - ब्यवसाय के
सभी बालूघर
राह बाट का मजा
उजड़ जाएगा

Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

अगर एक सी दिखे
नारी का
अंतर
शरीर ...।

अर्द्धभाग
खंडित मनुष्यों का
अंध नीरव
खरीद विक्री बीच
नष्ट नारी की जीभ
शून्य से झूलती रहे
दॉय दाँय
उसके देह मन का
खुला विज्ञापन।

वे और
देह न मॉग
नष्ट नारी का
सिर माँगें
घन घन



Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

कहो कहो ....

कहो कहो
अब की स्पष्ट
सारी बातें कहो

भीतर बाहर से
जितनी जितनी
आसारता सब
बिना सोचे विचारे
पोंछ दो ।

एक बार साहस कर
सालिस और सहिष्णुता की
मैली औंढ़नी
खोल दो ।

बचा रहेगा जितना
जो थोड़ा सा सच
सच में
कितनी सुंदर तुम
ओ कल्याणी
ओ: क्या अतुलनीय ...।

Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

पद्मिनी ओ
लटपट पंक भीतर
परम प्रस्फुटन के
अकपट आवेग से गढ़ी
तुम्हारी शुभ्र कोमल
देह पखुड़ी सें
इस बार देखो ...
कैसे प्रतिबिंबित होती
सूर्य की प्राणमय
मधुर किरण ...।

अनुभव करो
प्रेम की सुगंधित
परागरेणु से भरी
तुम्हरी आत्मा
कितनी कृतज्ञता से
आहरण करे
अनासक्त चिरौरी का चुबंन

यदि छलना नहीं
माटी में, झरना में
अरण्य में, सागर लहरों में
मेघ में, चंद्र किरण में
तो ओ प्रकृतिसमा
तुम क्यों

Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

आत्मप्रतारणा की
असहाय जरायु भीतर
बारबार छिपाओ
लालन करो
और किसी का
स्वार्थ, दंभ, लालसा
और शठता का भ्रूण

दो
मुकुलित कर निजको
एकबार कष्ट कर ।
वांछित ।
प्रेम पुरूष पास से
तुम्हारा ब्यवधान
उतना मात्र

जितनी दूर है
भीरू, निर्वाक, सुविधाभोगी
सुलक्षणा पास से
तुम्हारे भीतर की
निर्भीक, दुःसासहसी
सत्यवादिनी नष्टनारी ।



Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

सच कहने से

सच कहने से
सच सहना
बड़ी बात।

सच कहते वक्त तो
भीतर की पृथ्वी
हल्की हो जाये
चंद्र सूर्य
उगें आँखों में।

फूल पँखुरी
उड़ती ज्यों पवन में
मनगहीर की
बाट अबाट चला जा सके
सुवास पीठ पर

महामेरू सा
खड़ा हुआ जा सके
चलते स्रोत के सामने।

Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

विषम गाँठें सब खुल जाएँ
बया के बसेरे में
सोया जा सके निश्चिंत नींद में।

सत्य प्रियवादी
नहीं-ऐसा
क्यों कहते हो ?

सत्य तो
आत्मा के ललित
आरोह अवरोह में
संगीतमय कर दे जीवन
कितने अपने अपने
लगें तरू लता तृण
सत्य को
छाती से दबाए रखने से
पल भर में
अनुभव बदल जाएं
कविता में।

जो हो सच सहना
इतना सहज सरस
नहीं बिल्कुल।

मूहर्मूहू भुलुंठित
ममकार

Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

क्रमशः क्षमताच्युत
समाज संस्कार।
तुच्छतम मनुष्य का
उच्च अधिकार।

भाव को निकट कर
अभाव को दूर करने का
दुख सुख
जो जाने
वही जाने

कितना कष्ट
ये सब एक जगह कर
निर्माणना
संपर्क की निःसर्ग निःसर्त्त
परिसीमा ।

सच कहते समय
अतएव खुद ब खुद
नष्टनारी
झुक जाती रहे
सच सहने वाले पाँव से
छुआने को माथा।



Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

अपुरूष, कापुरूष, पुरूष ...

अपुरूष
कापुरूष
पुरूष
सुपुरूष
पूर्णपुरूष
प्रज्ञापुरूष
के रास्ते
प्रेम पुरूष के पास
पहुँचना होता है।

और कोई
जाने न जाने
नष्टनारी को
ये अगम्य
पत्थर को भेद
भेदना पड़े।

ज्यादा से ज्यादा
एक पुरूष को
भेंटने के
दुर्लभ अनुभव के पास

Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

यात्रा स्थगित रहे
प्रायः, हरेक नारी की ।

मूहूर्मूहू
दमित ब्यवहृत होने की
क्लांति और पीड़ा से
जरा त्राहि मिलने से
कितना सद्य सतेज
कृत्य कृत्य दिखे
उसका मन शरीर ।

लेकिन कैसे कहूँ
सुख संतोष के
उसी पवित्र पाद देश से ही
आरंभ होती है
आत्मा शिखर को
आरोहण करने की
महायात्रा
नष्टनारी की ।

इस बार
वह पुरूष का हाथ धरे
सुपुरूष की आँख में
आँख डाल हँसे ।
निरीह प्रश्नवाण से
जर्जरित करती रहे
प्रज्ञा पुरूष को

Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

निज को
अतिक्रम करने के
आवेग में
बाँध रखे
पूर्ण पुरूष को
रमण के चरम आश्लेष से।
शून्यता की ओर के
रास्ते की ओर बढ़ने ब्यतीत
पूर्णता की भूमिका वा
क्या है और ....?

नष्ट नारी
पूर्णता को जितनी जितनी
भोगती रहे
शून्य पुरूष उतना
निकट दिखे।

शेष में
ब्रम्हांड की समस्त नारियों की
विशुद्ध प्रेममयता सिवाय
नष्ट नारी की
अन्य कोई सत्ता ही
और बाकी न रहे।

Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

आह ...
क्या दिब्य सामारोह देखो
उसी प्रेममयता से
प्रेम पुरूष प्रकट होते
धीरे धीरे

नारीपुरूष प्रभेद
जाना न जा सके
मिलन के समाहित
नित्य महारास में।



Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

भाव परिचय को

भाव का परिचय
मधुरतर पाने
देह का परिचय
इतरतर कर
नष्टनारी
जड़े फैलाए भेद जाए
अतल तल
पाताल।

पाप से अंधेरे से
पंक से गटर से
श्वासरोधी हलाहल से
चौरासी नर्क भोग से
आहरण करती रहे रस।

वह जाने
कहीं न कहीं
महाशून्य में
उड़ता धूम रहा
प्रियतम हंस उसका

Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

जितनी गहराई में
जाये देह
उतनी ऊर्ध्व में फैलें भाव की
शाखा - प्रशाखाएँ
उतनी संचित हो
छनी सुधा प्रीति
गले सढ़े अस्तित्व से
उतना खिल उठेगा
प्रियतम हंस का
प्रिय... प्रिय
आकाश मृणाल।

देह की
सकल आकांक्षा को
प्राणभर आदर करते समय
कृतज्ञ देह ही
उसे मुक्त करती रहे
तमाम असत्य से।

मंच मे रहे मूल
और स्वर्ग लगे डाल
नित्य सुख महके
अनित्य तुच्छ से



Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

कविता छूने से

कविता छूए तो
भूलजाए
नष्टनारी कि
वह एक नारी ।

कविता को आबरूहीन
देह मन के
सुख दुख
समर्पते समय
वह याद न रख पाए
बिहारी से
विद्यापति तक
उसकी देह के
तिनके तिनके का
जिम्मा लिए थे
और मन का ...?

Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

ज्यादा से ज्यादा
उसके हिस्से आएगी
एक टुकड़ा अप्राकृत प्रेम मूर्त्ति
और नहीं तो
शायद थोड़ी
कोई देवी
या अप्सरा

अपने को अच्छी लग रही सब कुछ
छिपा छिपा
उन्हे अच्छी लग रही सब
दिखा दिखा
काल काल
प्रतारित
आत्म प्रतारित होने की
हीनमन्य-दहन भीतर से
अनावृत्त पद्मप्रतिमा की तरह
खुद खुद को
उद्धार करे नष्टनारी

कलम धरने से
उसके शीर्ष
नंगा हाथ
कहे उससे
पाप पुण्य

Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

देह विदेह
और जो
हो न हो
कविता में
सत्य का अपलाप होने से
कविता कविता हो
रहे नही और

नष्टनारी अवचेतन में
निज को
कविता सहित
एकाकार करे

कविता की
नोंक से
काट काट
देखती रहे
अपने अनजले पिंड की
कारीगरी
क्षण में पिंगला
क्षण में ईश्वरी
और क्षण में किशोरी

Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

अपने अस्तित्व के
सकल बेढ़े हुए अलिंद
मुखशाला ....गर्भगृह की
परिक्रमा करती

शेष में
नारीत्व का
दुस्तर पारावार
अतिक्रम करती रहे
अघोरी शब्द सुंदरी

स्तब्ध तकती रहे
मुग्ध नष्ट नारी



Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

वह क्या और

वह क्या और
सिर्फ स्त्री एक
होकर है कि
उसे कुछ
कहने से तकलीफ हो !

कितनी बार
कितनी मशान आग में
जल कर
छाती से रक्त निचोड़
निज को निश्चिन्ह करने के
यज्ञ में, आहुति
दे दे कर
निज की चिता भस्म की
विभूति चुपड़
नष्टनारी
योगिनी की तरह तलाशे
अपने भीतर
दिब्य सीमारेखा ।

Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

उसे अकेले
खुल्लम खुल्ला देख
जितने जोगी तांत्रिक
ताल बेताल, कापालिक
शववाहक ...
नजदीक आने पर
सभी से
उसने वही प्रश्न एक
पूछा है बार बार

कितनी दूर ...?
कितनी दूर जाने पर और
वह देह हो
देह में न होगी।
रूप हो अरूप को
अंत हो अनंत को
आदि हो अनादि को
अनायास छू पा रही होगी।

कहो कहो
उसके अस्तित्व के
सभी स्नायु
सभी तंत को
झंकृत कर कहो
कौन मंत्र निनादित होने से

Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

भीतर बाहर सब
नीरव होने पर भी
वह अनवरत शंख, घंट
बंशी-स्वन सुन पा रही होगी।

उस सहित
तुम और विश्वनियंता
समाहित हो
प्रणव भीतर दिखाई दोगे !

प्रश्नाकुलित
उन्मुक्त
अवारित
वह रूब रू हुआ
जब

मूलाधार
योनि, नाभि
स्तन मंडल
कंठ से ... कपाल
सबने सोचा
उसे पथ ।

Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

उसके
पथ से पंथ में पलटने की बात
किसी को पता नहीं

किसी को दिखा नहीं
उसके समाधिस्थ
नेत्रों के आगे
ये किस महासुख का
उद्‌भासित
असीम विस्तार



Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

दांपत्य

दांपत्य
अपत्य
या विभुप्रेम से
खिसक
प्राणमूर्च्छा परकीया में
माताल
नारी ही
नष्टनारी को मन ही मन
खोजे ज्यादा

सभी चोरी छिपी
ब्याकुलता को कैसे
उड़ेंले वह
किसीके आँचल में
कौन वह सखी
लांछित आत्मा को
जो जकड़ धरे
अपनी आत्मा में
कोई आतंकित, मूर्च्छित

Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

आवेग के कान कान
उच्चारित
प्रेम में
केवल प्रेम में
जीने की
मृतसंजीवनी।

कौन और
दो प्रेमाकुल
का मधुर मिलन देख
सबसे अधिक
होगा खुशी !

प्रेम में सत्य
और आत्ममर्यादा सिवाय
और किसी का
बोल माने नहीं
इसलिए तो
नष्टनारी
घर द्वार छोड़
बैठी रही है सड़क पर।

Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

आधीरात में
छठी घर लाँघते
दो पदचिन्ह में
जो जितनी
कुलटा दुराचारिणी
लिखते है लिखें
ठीक 'O' बर्तुल एक
घुमा दे वह चिन्ह चौहद्दी
नष्टनारी लिख दे

आह
मेरा शरद शशी



Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

भीतर हो कि बाहर

भीतर हो
कि बाहर
प्रकृति को
प्रतिरोध करने के
दंभ को
जलांजली दी है
नष्टनारी ।

नदी साथ
मिला चुकी
गति ।

नक्षत्र में
रख दी स्वप्न
फूल पंखुरी से
सीखी, हँसना
आषाढ़ से
रूठना

Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

उसे
जल प्रपात ने दी
उद्दामता
सूर्यालोक से
लाई वह कविता।
नंगल नोक की
गीली माटी से
स्पर्श लग्न में
उसने सीखा रमण

धूल से
शेफाली फूलों के
आत्म समर्पण से
सीखी मरण।

कितने बांट
कितने घाट की
टूटन गढ़न का
झूठ झूठा खेल
खेल चुकने के बाद
नष्टनारी
अपने को खो चुकी
निसर्ग -. सुरति में

Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

इतना सुख !
यह परिपूर्ण
आत्म विस्मृति में ... !

आज
नेत्र मूँदने से
ईष्ट दर्शन
बाँह पसारने से
प्रियतम
अंग छूने से
मधुर मिलन

वह तो
प्रीति की नीति
हो चुकी
संसार और संपर्क की
विरति में ।



Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

दया कर

दया कर
कोई उसे
कहो मत
वह कैसे हँसे
बैठे,
किसे प्रेम करे।
कविता में कौन शब्द
दे न दे।

सभ्यता के पृष्ठ
उलट पुलट
बार बार
वह देख सकी है
युग युग से
सत्य को ही हर काल में
मृत्युदंड मिला है
समाज से।

Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

फिर भी
एकाकी वही
सत्य ही
हाथ थामे खींच लाया
समाज को
तमाम नीचता
अमानविकता के
अंध कूप से ...।

कविता में
सत को साब्यस्त करने की
साधना में
समाज के सब हिसाब को
अतएव वह हाथ जोड़
विदा माँग चुकी
बहुत पहले से

मुक्ति की जिद्द में
वह पैसलियों को भी
कर चुकी आकाश ...

उड़नमुखी
पाखी की तरह
वह खातिर करे नहीं

Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

कहाँ
कैसे पड़ रहे हैं
उसके दिगहारे
लघु पदचिन्ह।

बाहर और भीतर की
असंख्य सांकलों को
खीचं खीचं
डेने झाड़ते वक्त
जितनी वेदना
वह अनुभव करे
उतने से
वह जान ले
कि नष्टनारी का
बंधु मित्र, कुलगोत्र
कोई नहीं, कुछ नहीं
प्रेम और मुक्ति के लिए
मर रही नारियों में
केवल वह
एक सम्मिलित वृंदगान।

नष्टनारी
धीरे धीरे समझी
कविता लिखना
और कविता जीना

Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

कभी भी
एक ही बात नहीं।

कविता में जीना
सीमा नहीं, ब्याप्ति
उच्चासन नहीं मुक्ति
असहायता नहीं शक्ति
भोग नहीं भक्ति
आच्छादन नहीं उन्मुक्ति।

नष्टनारी की कविता
खुली मुकुलित
देह मन के
बखान
अंतराल मे छिपी
नंगी धार छुरी की तरह
सकल आनुष्ठानिकता
निरस्त करने की
तीखी नीरवता।

वह स्वप्न हो
या सतीत्व
मर्यादा हो या महत्व
किसी को फाड़ने के पहले से
अपने को फाड़ विदीर्ण कर

Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

जो अपने से
अलग कर चुकी
नारीत्व के
तमाम छद्म स्तुतिपाठ
आत्मप्रतारणा
अलंघ्य तमाम
धारावाहिकता ...।



Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

एक बार
सत के इलाके में
पाँव का अभिसार
सभी सपने
सत कर दे।

चोरी छिपे जितने सब
अँधेरे दरवाजे
दिखें टूटे फूटे
दरिद्र दरिद्र ।



Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

न जाने किसलिए

न जाने किसलिए
उससे प्रेम कर रहे
लोगों को
बारबार क्षमायाचना की
जरूरत पड़े
उसके नगण्य से नगण्यतम
प्रकाशित, प्रेमानुराग में।

कैसे क्या जाने
ये बात भी
पहले से मालूम रहती है
उस नष्टनारी को
अतएव उनके
पीछे पीछे
चल रहे वक्त
उसकी क्षमाशीलता
चलती रहे आगे आगे
कांटे फाँटे न हेज
प्रीति पथ में दौड़ती

Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

एक नष्ट नारी
उसे समय कहाँ देखने का
उनके उसके साथ
चल न पाने की अदाकारी
विभिन्न अदाओं की

एक नारी के
ऋतुमति होते ही
प्रेमी का वेश धरे
प्रलुब्ध हो रहे
अहंकारों के
शुद्ध प्रीतिमति के पास से
पलायन करने का
शेष दृश्य
इतिहास के मंच पर
लाख लाख बार
अभिनीत हो चुका।

प्रेम की अचलाचल
संपद की देवी को
क्षमा का चिल्हर माँग माँग
कितने अनायक
ले चुके चोरी छिपे विदाई
क्षमा को महार्घ
कभी माने नहीं नष्टनारी

Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

मॉगने से पहले
ठीक उतने ही आवेग से
वह क्षमा कुसुम बिछा दे
उनके लौटने के रास्ते पर

एक दिन उनका रास्ता देख देख
उस प्रीतिकुसुम ने
सजाये थे
जितने अनुराग से .... ।



Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

इतने दिनों में

इतने दिनों में
उन्होंने
भला क्या दिया
इस पृथ्वी को ?

हिंसा और क्षमता
की अंधी प्रतियोगिता
बसुंधरा भोगने का
भ्रष्ट पता ।

घन घन युद्ध
रक्तपात, बलात्कार
प्रेम प्रतिदान में
असंख्य दायित्वहीन
वीर्य कण ।

और हमारे मन में
निज का गर्व
सौंदर्य, शक्ति

Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

सर्वोपरि निज के प्रति
कुछ ब्यथा
कुछ असहायता
कुछ विराग
और घृणा भरपूर !

अविकल मुझ सी
मुँह बंद कर
निज आत्मा और धरती की ये
निर्यातना सह रही
ओ मिट्टी पत्थर की
देवियों

युगावधि
विलास और अहंकार की
पुन:पौनिक दुर्घटना का
पुरूषत्व हरा चुके
देवताओं का
तेज क्या और
है कि ....
तुम उससे
दुर्गा होना
संभवित मान
इंतजार कर रही हो

Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

ओ नष्टनारी
अब सभी माटीपन
और शिलापन की
निर्वेदिता को
धर्षिता के असयंत
वस्त्र की तरह फेंक
प्रकंपित होने
प्रत्याघात देने की
बेला आखिरकार आ चुकी।

छद्म पौरूष पाँव से
शुद्ध नारीत्व को
नैवेद्य देने का
तथाकथित पुण्यफल
देखो
कैसा काकुस्थ
हाथ जोड़े तुमसे
कापुरूष देवत्व
मॉगता विदाई



Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

कापुरूष देवत्व

कापुरूष देवत्व
अपुरूष दानवत्व
बीच में
पशु की विश्वस्त पीठ।

क्लीव मानव आगे
विवसना
आदिम प्रकृति।

इस बार बदल जाए
दर्पण का प्रतिबिंब।

सर्वांग
क्रोध और ग्लानि में काला
मुक्त हो
पुष्प सज्जित जूड़ा।

कटे हाथ, कटे सिर के
परिधान प्रसाधन में
कहाँ वह वधूई ओंठ ?

Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

लहू टक्टक् जीभ
झूलती
ब्यंग करे
आतंकित करे
अहंकार को
लालसा को
विलास को

रुधिर सिलबिल देह
महाकाल अंजुरी में
सद्य प्रस्फुटित
सच में कि रक्तजवा।

क्या बलि माँग रही
कात्यायनी ?
शत महिष ?
सहस्र छाग
ना अगणित
अकाल कुष्मांड ?

गर्भ में सद्य संचरित
नारी के अनुकूल
इस पृथ्वी को
प्रस्तुत करने की
जरूरत होगी
किसके .... किसके सिर ?

Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

कागज नाव से भरे
नष्ट नारी के स्वप्न को
उस कूल को बाह ले
निरापद में
जो रक्तनदी
उस नदी की
उत्पत्ति कहाँ ?

खर्पर
मंदिर
सिंहासन
रणभूमि
या राजदंड ?

आजतक
केवल गर्भपात के
शोणित सींचित
योनि विवर भीतर
ताडंव में मत्त रहे
विश्वरूपा

Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA

दर्पण की बंदीशाला से
बाहर आए छायानारी
एक फूलमाला बन
लंब जाए
महाकाली चरण में

ब्रम्हांड में गूंज उठे
प्रसव वेदंना
ना देवीस्तुति ?



Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA



महेंद्र शर्मा

जन्म: १९४४

अवकाश प्राप्त प्राध्यापक

कृति: मूलत: हिंदी कहानीकार बहुत सी कहानियाँ 'धर्मयुग', 'नवनीत' आदि में प्रकाशित, विभिन्न भारतीय भाषाओं में अनूदित, प्रशंसित।

सौंदर्य शास्त्र पर ग्रंथ: 'सृजन: भारतीय कला संदर्भ' कथा संग्रह: 'रियाज और रियाज'

दर्शन: 'अतिक्रामिता और मुक्ति'

अनुवाद: अनेक ओड़िया कहानियों का हिंदी में अनुवाद प्राय: दस काव्य कृतियों, एक उपन्यास, एक कथा संग्रह का ओड़िया से हिंदी में अनुवाद प्रकाशित।

संपर्क: एन.६/५०३, आइ.आर.सी. विलेज

भुवनेश्वर -१५

दूरभाष: मोबा: ९८६११७३७७५

Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA



अपर्णा महांति

समकालीन ओड़िया कविता में अग्रणी निर्भीक नाम। एक विद्रोही काव्य स्वर। शब्द और भाव की तीक्ष्णता और प्रसरणशीलता के लिए विख्यात। संप्रति केंद्रापड़ा स्वयंशासित महाविद्यालय में अध्यापना रत।

प्रकाशित काव्य संग्रह : 'अब्यक्त आत्मीयता', 'असती', 'निशब्द में', 'अतिथि', 'पूर्णतमा' 'नष्टनारी' आदि प्रकाशित

अनूदित : कवि गुलजार का 'पुखराज' प्रकाशित। हिंदी में 'व्दिपर्णा' काव्य संकलन प्रकाशित।



ज्ञानयुग पब्लिकेशन
भुवनेश्वर-१५, ओड़िशा



Source: Author, Digitized by PPRACHIN, SOA